महर्षि पाणिनि संस्कृत एंव वैदिक विश्वविधालय, उज्जैन
डिप्लोमा योग
प्रश्नपत्र - द्वितीय
इकाई-2

मिताहार

योग ग्रन्थों एवं आयुर्वेद में मिताहार का वर्णन मिलता है। मिताहार अर्थात् अल्पाहार, मात्रा में कम एवं पचने में आसान भोजन।

मिताहार का महत्व
आहार शरीर का पोषण करता है एवं यौगिक ग्रन्थों के अनुसार यह मन का भी पोषणकर्ता है। स्थूल अन्न के स्थूल भाग से शरीर का पोषण होता है एवं सूक्ष्म भाग से मन का पोषण होता है। योग साधना शरीर के द्वारा ही की जाती है। योग साधना का आधार शरीर ही है। अतः शरीर की रक्षा हमारा कत्तव्य है।
आचार्य
चरक ने चरक सूत्र में कहा है -

आहारसम्भवं वस्तु रोगाश्चहारसम्भवाः। चरक सूत्र 28/45

अर्थात शरीर आहार से ही उत्पन्न हुआ है और सभी रोग भी आहार के दोष से ही होते हैं। किसी व्यक्ति के लिये जो आहार लाभप्रद होता है वह पथ्याहार कहलाता है। और जो आहार लाभप्रद नहीं होता वह अपथ्याहार कहलाता है। पथ्य अर्थात् हितकर एवं अपथ्य अर्थात अहितकर। हितकर भोजन मन के लिये प्रसन्नता का कारण बनता है, शरीर को पुष्टि प्रदान करता है।
निम्नलिखित संगठन किसी भोजन को पथ्यकारी बनाते हैं -
1.मात्रा
2.काल
3.क्रिया
4.भूमि
5.देह
6.देश

मात्रा अर्थात कितनी मात्रा हो कि भोजन पथ्यकारी हो, समय दूसरी महत्वपूर्ण शर्त है प्रातः, सायं, अपराह्न।
क्रिया से तात्पर्य भोजन बनाते समय रसोइये के भाव हैं।
भूमि अर्थात् किस स्थान, मौसम में भोजन बनाया जा रहा है।
देह से तात्पर्य उस व्यक्ति के शरीर से है जो भोजन ग्रहण करने वाला है।
देश से तात्पर्य व्यक्ति और समाज दोनों से है, व्याष्टि और समष्टि दोनों का समावेश है।
उपरोक्त संगठन यदि सही हैं, तो आहार शरीर व मन को स्वास्थ्य एवं आनन्द प्रदान करने वाला होता है। आहार हमारे शरीर के लिये उतना ही आवश्यक है जितना गाड़ी के लिये ईंधन। ईंधन में खराबी, मिलावट होने की स्थिति में गाड़ी में खराबी आना स्वाभाविक है, ठीक उसी प्रकार भोजन अथवा आहार के विषय में भी सत्य है।

आयुर्वेद के अनुसार, "शरीर का हम पोषण करते हैं तो शरीर हमारा पोषण करता है।" अन्यत्र भी कहा गया है -"जैसा खाये अन्न, वैसा बने मन"।
श्रीमद्भगवद्गीता में भी वर्णन मिलता है कि "यह योग न तो बहुत अधिक खाने वाले को और न बिल्कुल न खाने वाले को, न बहुत शयन करने वाले को और न सदा जागने वाले स्वभाव के व्यक्ति को सिद्ध होता है।"- गीता 6/16
आहार की शुद्धि से ही चित्त की शुद्धि होती है।

यौगिक साहित्यों में मिताहार का वर्णन
आचार्य शंकर के अनुसार, "जो इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया जाये, वह आहार है।"
मिताहार अर्थात संतुलित मात्रा में जो ग्रहण किया जाये, वह मिताहार है। यह न अधिक
मात्रा में लिया जाये और न कम ही लिया जाये। हठाभ्यास में शरीर को संतुलित रखने के लिये आहार पर विशष ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

मिताहार के विषय में अर्जुन को उपदेश करते हुए भगवान श्री कृष्ण कहते हैं -

युक्ताहारविहारस्य
युक्तश्रेष्टस्यकर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य
योगो भवेत् दुःखहा।।(श्रीमद्भगवद्गीता 6/17)

अर्थात् दुःखों का नाश करने वाला योग तो यथायोग्य आहार-विहार करने वाले का, कर्मों में यथायोग्य चेष्ठा करने वाले का और यथायोग्य सोने तथा जागने वाले का सिद्ध होता है।
युक्त आहार-विहार का तात्पर्य है कि - "खाने-पीने की वस्तुऐं ऐसी होनी चाहिये जो अपने वर्ण और आश्रम धर्म के अनुसार सत्य और न्याय के द्वारा प्राप्त हो। रजोगुण और तमो गुण को बढ़ाने वाला न हो तथा योगसाधन में सहायता देने वाला हो। उसी प्रकार घूमना, टहलना भी उतना ही चाहिये जितना अपने लिये आवश्यक व हितकारी हो।"

मिताहार का वर्गीकरण
पूर्व वर्णित छः भावों को समाहित करते हुए मिताहार को तीन भागों में बांटा जा सकता है-
1. मात्रा के दृष्टिकोण से
2. गुणवत्ता के दृष्टिकोण से
3. मनःस्थिति के दृष्टिकोण से

1.मात्रा के दृष्टिकोण से मिताहार का तात्पर्य कम और सुपाच्य भोजन से है। घेरण्ड संहिता में कहा भी गया है -

शुद्धं सुमधुरं स्निग्धमधुरार्धविवर्जितम्।
भुज्यते सुरसम्प्रीत्या मिताहारमिमं विदुः।।21।।
अन्नेन पूरयेदर्धं तोयेन तु तृतीयकम्।
उदरस्य तृतीयांशं संरक्षेद्वायुचारण।।22।।

अर्थात् शुद्ध, सुमधुर, स्निग्ध भोजन को सन्तोषपूर्वक आधा पेट भरना और आधा खाली रखना चाहिये। विद्वानों ने इसे मिताहार कहा है। पेट के आधे भाग को अन्न से, तीसरे भाग को जल से भरना और चौथे भाग को वायु संचलन के लिये खाली रखना चाहिये। 'अष्टांग योग' में चरणदास जी मिताहार को परिभाषित करते हुए कहते हैं -
"प्रत्येक व्यक्ति को प्रकृति ने तृप्तता के भाव को दिया है। प्रत्येक व्यक्ति का तृप्तता का पैमाना अलग-अलग है। किसी को
कम एवं किसी को अधिक भूख लगती है, अथवा कम एवं अधिक खाने से तृप्तता का एहसास होता है। मिताहार के अभ्यास द्वारा इस गुण को विकसित किया जा सकता है।"

दर्शनोपनिषद में वर्णन मिलता है कि "भाग्य में रखे गये भोजन के एक चैथाई भाग को छोड़कर भोजन ग्रहण करना चाहिये।"
हठप्रदीपिका में कहा गया है, स्निग्ध तथा मधुर भोजन भगवान को अर्पित कर पूर्ण आहार का चतुर्थांश कम खाया जाये, उसे मिताहार कहते हैं।